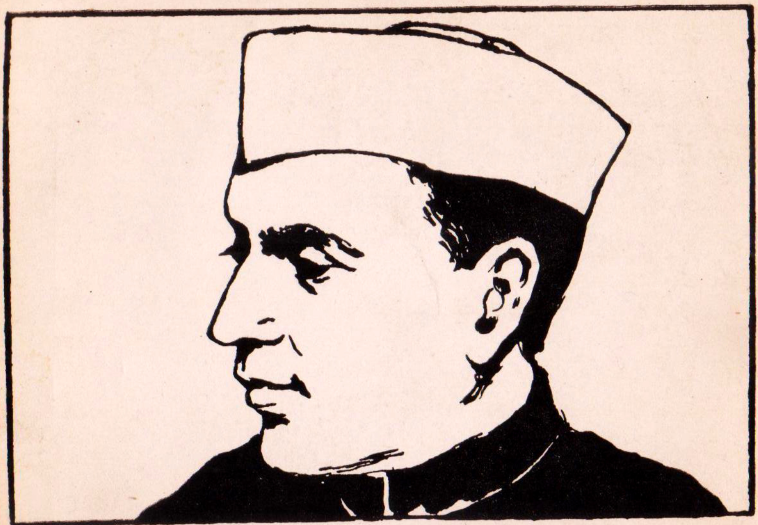


भारत के वैज्ञानिक

बीरबल साहनी



भारत के महान वैज्ञानिक

बीरबल साहनी

विश्वमित्र शर्मा

शिक्षा भारती, कश्मीरी गेट, दिल्ली

मूल्य : पांच रुपये (5.00)

शिक्षा भारती, मदरसा रोड, कश्मीरी गेट, दिल्ली-110006 द्वारा प्रकाशित
BIRBAL SAHNI (Biography), by Vishwamitra Sharma

क्रम



बीरबल साहनी का कार्यक्षेत्र

प्रसिद्ध वैज्ञानिक डॉ० बीरबल साहनी विज्ञान की पुरा-वनस्पति शाखा के विशेषज्ञ थे। यह विज्ञान वास्तव में वनस्पति विज्ञान (बोटेनी) की ही एक शाखा है, जिसे अंग्रेजी में 'पेलियो बोटेनी' कहते हैं। इससे जीवन के पुराने इतिहास का पता लगाने में बहुत सहायता मिलती है।

इसके लिए पहले वनस्पति विज्ञान को समझना उचित रहेगा। वनस्पति-विज्ञान—पेड़-पौधों और फूलपत्तियों से संबंधित विज्ञान है। सबसे पहले मनुष्य ने पेड़-पौधों को अपनी भोजन सामग्री के रूप में पहचाना। धीरे-धीरे उसने पौधों को पालतू बनाया और अपनी इच्छानुसार उन्हें अपने भोजन का साधन बनाने के लिए विकसित किया। यह प्राचीन काल में भी नहीं कहा जा सकता था और न आज ही कहा जा सकता है कि सब प्रकार के पेड़-पौधे, फूलपत्तियां सभी क्षेत्रों में प्राप्त होते हैं। यह इस पुस्तक का विषय नहीं है, फिर भी यह जानना रोचक होगा

चाहिए कि मनुष्य ने खाने के लिए गेहूं का अथवा अन्य अनाजों का उपयोग कब किया और किस क्षेत्र के लोगों ने पहले किया। इसी प्रकार हो सकता है कि मिस्र में ही सबसे पहले कपास का उपयोग वस्त्र बनाने के लिए किया गया हो।

ज्यों-ज्यों मनुष्य वनस्पति के संबंध में अधिक ज्ञान प्राप्त करता गया, उसने भोजन के साथ-साथ रोगों के उपचार के लिए भी उसका प्रयोग आरंभ कर दिया। आयुर्वेद के अनेक प्राचीन ग्रन्थों में विभिन्न बड़ी-बूटियों का किन रोगों के लिए प्रयोग हो सकता है, इसका बहुत व्यापक विवेचन है। यूनानी, एलोपैथिक आदि सभी प्रकार की दवाइयां भी जड़ी-बूटियों द्वारा तैयार की जाती हैं। इसलिए संभवतः यह प्रतीत होता है कि वनस्पति विज्ञान में प्रारंभिक विशेषता चिकित्सक लोगों ने ही प्राप्त की होगी।

अंग्रेजी भाषा में वनस्पति विज्ञान के लिए 'बोटेनी' शब्द प्रयुक्त होता है। ग्रीक भाषा में 'बोटेनी' का अर्थ 'खाना' है। इससे स्पष्ट है कि सबसे पहले मनुष्य ने वनस्पति का उपयोग अपनी भोजन सामग्री के रूप में किया और धीरे-धीरे वनस्पति का उपयोग चिकित्सा के लिए होने लगा। सोलहवीं शताब्दी में वनस्पति के संबंध में अधिक अनुसंधान कार्य प्रारंभ हुआ। खुर्दबीन के विकास के बाद वनस्पति के संबंध में उसके प्रत्येक अंग पर विचार किया जाने लगा। इतना ही नहीं, यह भी पता लगाया गया कि वे किस प्रकार के वातावरण, मिट्टी और जलवायु में किस प्रकार फलते-फूलते हैं, उनका विकास किस प्रकार होता है, किस प्रकार की मिट्टी—किस प्रकार के पौधों के लिए आवश्यक होती है।

उन्नीसवीं शताब्दी में डारविन के विकासवाद सिद्धांत से यह सिद्ध हो गया कि जिस प्रकार सीधे-सादे पूर्वजों से आधुनिक जीवों का विकास हुआ, उसी प्रकार प्रारंभिक जलीय पौधों से वनस्पति का विकास हुआ।

वनस्पति विज्ञान ने इस बात का अनुसंधान किया कि धीरे-

धीरे पौधों का निर्माण किस प्रकार होता है, और वे किस प्रकार अपने पत्तों द्वारा भोजन ग्रहण करते हैं। उनके पत्ते हरे क्यों होते हैं और उनका तना इस प्रकार स्थिर और अनेक परतों वाला क्यों होता है।

वनस्पति के विकास की कहानी उनके जीवाश्म अवशेषों द्वारा मालूम करने में बहुत सहायक सिद्ध हुई है। वनस्पति के इन जीवाश्म अवशेषों को ही पुरा-वनस्पति विज्ञान से संबंधित माना जाता है। इसका भाव यह है कि पेड़-पौधों के विभिन्न अंग, पत्ते, फूल, फल और बीज आदि पृथ्वी पर गिरकर धीरे-धीरे प्रस्तरीभूत हो अथवा मिट्टी की परतों में दब जाते हैं और धीरे-धीरे पत्थर बन जाते हैं। विज्ञान की इस शाखा से अनेक बातों का पता चलता है। इतिहास और मनुष्य के विकास की कहानी कहने में भी पुरा-वनस्पति विज्ञान काफी सहायक सिद्ध होता है।

बीरबल साहनी पुरा-वनस्पति विज्ञान के विशेषज्ञ थे।

घर-परिवार और बचपन

लाहौर का ब्रैडला हाल !

ब्रैडला हाल लाहौर को राजनीतिक गतिविधियों का केन्द्र था। लाहौर की सभी प्रमुख राजनीतिक सभाएं प्रायः वहीं हुआ करती थीं। उसके थोड़ी ही दूर लाहौर की प्रमुख शिक्षण संस्थाएं बनी हुई थीं।

इससे थोड़ी दूरी पर लाहौर के एक सुप्रसिद्ध शिक्षा-शास्त्री प्रो० रुचिराम साहनी रहा करते थे। साहनी साहब गवर्नमेंट कालेज लाहौर में रसायन विज्ञान के प्रोफेसर थे। विद्वान होने के साथ-साथ वे महान देशभक्त भो थे। उन पर सरकार की कृपा तो थी ही, परन्तु देश के सभी महान राष्ट्रभक्त नेता प्रायः उनके घर ठहरा करते थे। पं० मोतीलाल नेहरू, गोपालकृष्ण गोखले, मदनमोहन मालवीय तथा हकीम अजमल खां भी जब भी लाहौर जाते, वे उनके घर ठहरते थे।

उत्तर भारत में जिस प्रकार लाहौर शिक्षा का केन्द्र था उसी

प्रकार वह राजनीतिक गतिविधियों का केन्द्र भी बन चुका था। इतना ही नहीं, चिकित्सा के क्षेत्र में भी उन दिनों लाहौर का विशिष्ट स्थान था। कुछ व्यक्ति तो लाहौर को भारत का पेरिस कहा करते थे। क्योंकि फैशन संबंधी नई रुचियों का प्रारंभ वहीं से होना माना जाता था।

यह वही ब्रैडला हाल था, जिसके समीप पंजाब केसरी लाला लाजपत राय पर साइमन कमीशन का विरोध करने के लिए लाठियों का प्रहार किया गया था, जो लाठियां उनके लिए घातक सिद्ध हुई थीं। ब्रैडला हाल के आस-पास प्रदर्शन करने वाले लोगों पर प्रायः लाठियां बरसतीं और अश्रुगैस छोड़ी जाती, 'हाय, हाय ! मुर्दाबाद' और 'ज़िन्दाबाद' आदि के नारे लगाए जाते। यह कैसे संभव था कि ब्रैडला हाल के आस-पास रहने वाले लोगों पर इसका प्रभाव न पड़ता। बीरबल साहनी उन दिनों यौवन की दहलीज में कदम रख रहे थे। उन पर इन सब बातों का प्रभाव यह हुआ कि वह इंग्लैंड से अपनी शिक्षा समाप्त करके जब भारत लौटे तो उन्होंने आते ही पूर्णतया खादी के वस्त्र पहनना शुरू कर दिया।

'सारे जहां से अच्छा हिन्दोस्तां हमारा'— नगमा लिखने वाले इकबाल साहब भी उस समय लाहौर में ही रहा करते थे। कलकत्ता और बम्बई के बाद संभवतः नागरिक सभ्यता का सबसे अधिक विकास वहीं हुआ होगा। प्रो॰ रुचिराम साहनी अपनी विद्वता और विचारों के कारण लाहौर के सुप्रसिद्ध व्यक्तियों में माने जाते थे।

बीरबल साहनी के जीवन का प्रारंभिक भाग यहीं बीता।

बीरबल साहनी के दादा

बीरबल साहनी के पिता का नाम जैसा कि हम अभी बता चुके हैं, प्रो॰ रुचिराम साहनी था। रुचिराम साहनी के पिता तथा बीरबल साहनी के दादा प्रारंभ में डेरा इस्माइल खां (पाकिस्तान)

में रहा करते थे। वे वहां साहूकारे का काम करते थे। एक समय ऐसा आया कि साहूकारे का काम मन्दा पड़ गया और उन्हें डेरा-इस्माइलखां से भेरा नामक एक छोटे से कस्बे में आना पड़ा। बीरबल साहनी का जन्म 14 नवंबर, 1891 में भेरा में हुआ।

डेरा इस्माइलखां छोड़ने का कारण यह था कि उनके परिवार की आर्थिक स्थिति बिगड़ गई थी और बीरबल साहनी के दादा की मृत्यु हो गई थी। बीरबल के पिता रुचिराम साहनी पर इन सब बातों का प्रभाव पड़ना आवश्यक था, परन्तु इस व्यक्ति ने कभी भी अपना उत्साह मंद न पड़ने दिया। पंजाब में प्रायः धनी परिवारों के लड़के अच्छे वस्त्र तो पहनते ही थे, साथ ही कानों में सोने की बालियां भी पहनते थे। घर की आर्थिक अवस्था खराब होने के कारण रुचिराम साहनी को इन सब बातों से वंचित होना पड़ा। जब उन्होंने अपनी इस हालत की शिकायत अपने पिता से की तो उन्होंने कहा कि संकट के समय को धैर्य और सहिष्णुता से निकालना चाहिए। संकट में घबराना पुरुषों का काम नहीं। विपत्तियां तो आती-जाती रहती हैं। एक न एक दिन विपत्तियों के ये काले बादल अपने आप छंट जायेंगे।

बात कह देना जितना सरल होता है, उस पर अमल करना उतना ही कठिन। स्थिति ठीक न होने पर रुचिराम साहनी घबराए नहीं और अपनी शिक्षा के प्रति सचेष्ट रहे। उस समय वहां अपनी शिक्षा का प्रबन्ध होता न देख वह जिले के सदर मुकाम झंग आ गए। जिन दिनों वह झंग पहुंचे उन दिनों उनकी आर्थिक अवस्था इतनी खराब थी कि जेब में शायद डेढ़ रुपये से अधिक की पूंजी न थी। पूंजी थी केवल उनकी पुस्तकें। परन्तु रुचिराम साहनी प्रारंभ से ही बुद्धिमान और होनहार बालक थे, तथा उन्हें अपनी शिक्षा का खर्च पूरा करने के लिए छात्रवृत्ति मिलने में कोई कठिनाई न हुई। इतने अध्यवसायी पिता की संतान बीरबल साहनी पर कैसे प्रभाव न पड़ता। रुचिराम साहनी भारत में अपनी पढ़ाई पूरी कर छात्रवृत्ति के बल पर ही रसायन विज्ञान पढ़ने के लिए इंग्लैंड

गए और इंग्लैंड से आते ही उन्हें लाहौर के गवर्नमेंट कालेज में रसायन शास्त्र के प्रोफेसर का पद प्राप्त हो गया। तब तक लाहौर साहनी परिवार का घर बन चुका था। परन्तु इतने पर भी इस परिवार ने अपने पुराने स्थान भेरा से भी संबंध विच्छेद न किया था। घर में जब भी कोई शुभ कार्य होता—किसी बच्चे का जन्म, मुण्डन अथवा अन्य कोई किसी प्रकार का समारोह होता तो परिवार के सदस्य भेरा जाकर ही इन कामों को करते।

भेरा से उनके लगाव का एक कारण यह हो सकता है कि बीरबल साहनी की माता उनके जन्म से अत्यधिक प्रभावित थी और उन्होंने उनके जन्म को एक शुभ-लक्षण माना था। इसीलिए गर्मियों आदि की छुट्टी के दिनों में भी सारा परिवार भेरा जाया करता था।

प्रो० रुचिराम साहनी ने जिस उत्साह, लगन और कष्टों से शिक्षा प्राप्त करने के बाद अपने प्रयत्नों से उचित पुरस्कार प्राप्त कर लिया था, ये सब ऐसी बातें थीं जिनका उनकी संतान पर भी बहुत प्रभाव पड़ा।

वैज्ञानिकों के जीवन में अनुसंधान कार्य अनेक कठिनाइयों से पूर्ण होते हैं। बीरबल साहनी के सामने भी अनुसंधान कार्य में इस प्रकार की अनेक कठिनाइयां आती थीं। परन्तु उन्हें अपने दादा और पिता रुचिराम साहनी की प्रेरणा, उत्साह, वीरता और परिश्रम आदि जो बातें विरासत में मिली थीं उनके कारण वह कठिन-से-कठिन समस्या का समाधान ढूंढने के लिए सदैव तैयार रहते थे। वस्तुतः उनका सारा परिवार जीवन को एक चुनौती के रूप में मानता था। वस्तुतः जो व्यक्ति जीवन को एक चुनौती मान लेते हैं, वे इस संसार में सफल हुए बिना नहीं रहते।

रुचिराम साहनी ने पिता की मृत्यु के बाद जिस प्रकार धैर्य, दृढ़ता और लगन से अपनी शिक्षा को जारी रखा और कभी दिल छोटा न किया, उसी प्रकार बीरबल साहनी ने भी अपने बहुत थोड़े से जीवन काल में अनेक चुनौतियों का सामना करते हुए

अपनी योग्यता, दृढ़ विश्वास और लगन से उच्च शिक्षा प्राप्त करके लखनऊ विश्वविद्यालय में वनस्पति विज्ञान के प्रोफेसर का पद ग्रहण किया।

यह ठीक है कि प्रो॰ रुचिराम साहनी ने अपनी सभी सन्तानों को उच्च शिक्षा देने का पूर्ण प्रयत्न किया, परन्तु यह आवश्यक नहीं होता कि सम्पन्न और सुयोग्य व्यक्तियों के बच्चे सदैव उच्च शिक्षा प्राप्त करने के साथ-साथ महत्वपूर्ण पद प्राप्त करने में सफल होते हैं। इसके लिए व्यक्ति में लगन और उत्साह और कठिनाइयों से जूझने का बल होना चाहिए।

रुचिराम साहनी की एक विशेषता यह थी कि सरकार से सम्मान प्राप्त करने के बाद भी उनमें राष्ट्रीय भावना कूट-कूट कर भरी थी। इसलिए जलियांवाला बाग हत्याकांड से दुखी होकर ब्रिटिश सरकार द्वारा प्रदत्त सम्मान लौटाते हुए उन्हें तनिक भी कष्ट न हुआ, यद्यपि वे उस समय गवर्नमेंट कालेज में ही प्रोफेसर थे। परन्तु उनका मान-सम्मान और तेजस्विता युक्त प्रभाव ऐसा था कि ब्रिटिश सरकार भी उनके विरुद्ध कोई कठोर कदम न उठा सकी।

यह दिन भारत में भयंकर उथल-पुथल के दिन थे। शायद ही ऐसा कोई भारतीय होगा जिसके मन में किसी न किसी प्रकार की प्रतिक्रिया उत्पन्न न हुई हो। रुचिराम साहनी ने जिस समय ब्रिटिश सम्मान वापस किया तो उन्हें इस कदम के प्रतिक्रिया स्वरूप हानि की संभावना थी परन्तु उन्होंने इस बात की कोई परवाह न की।

बचपन

पूत के पांव पालने में ही पहचाने जाते हैं।

बीरबल साहनी को बचपन से ही विभिन्न प्रकार के पेड़-पौधे इकट्ठे करने का शौक था। इधर-उधर घूमते और खेलते हुए उन्हें जो भी पौधा मन भाता, उसे वे उखाड़ कर अपने कोठी में लगा

लेते। एक दिन की बात है कि उन्होंने ब्रैंडला हाल के आस-पास घूमते हुए अमलतास का एक पौधा देखा। उन्हें वह पसन्द आया। वे उसे उखाड़ कर भागते-भागते अपनी कोठी में ले आए और आकर वहां लगा दिया। इसमें उन्हें सांस चढ़ गया। वैसे देखा जाये तो यह विशेष बात न थी परन्तु इससे बालक के भावी जीवन का रुझान स्पष्ट होता है।

यह पौधा उनके जीवन में अंत तक छाया रहा। लखनऊ में जब वह पुरा-वनस्पति विज्ञान के प्रोफेसर होकर आए और गोमती के किनारे उन्होंने अपना घर बनाया तो किनारे-किनारे उन्होंने अमलतास के वृक्ष भी लगाए। गर्मियों में जब यह वृक्ष फूलता तो इसके पीले-पीले फूलों की पत्तियां और लंबे-लंबे गुच्छे गोमती के जल में झलकते हुए कितने सुन्दर प्रतीत होते। और इसकी महक एक निराली ही मादकता का भाव रखती और गांव वाले इसकी फलियां दवा-दारू के इस्तेमाल के लिए इकट्ठी कर लेते।

बीरबल साहनी की प्रारम्भिक शिक्षा भारत में ही हुई। स्कूल की शिक्षा समाप्त करने के बाद वे गवर्नमेंट कालेज लाहौर में दाखिल हुए। वहीं से उन्होंने वनस्पति विज्ञान के प्रति रुचि ही नहीं प्रकट की, वरन् एक प्रकार से यह निश्चय कर लिया कि वह अपनी आजीविका का साधन भी इसी में से खोज निकालेंगे।

लाहौर गवर्नमेंट कालेज में प्रो० शिवराम उन्हें वनस्पति विज्ञान पढ़ाते थे। जैसा कि हमने ऊपर उल्लेख किया, बीरबल साहनी को बचपन से ही पौधों के प्रति प्रेम था, परन्तु शिवराम जी द्वारा अध्ययन और उनकी देखदेख में उनकी रुचि विज्ञान की इस विधा की ओर तेजी से आकृष्ट हुई।

जिस प्रकार सर जगदीशचंद्र बसु अपने विद्यार्थी काल में ही पौधों के प्रति आकृष्ट थे और अपने स्कूल से थोड़ी दूर हटकर उन्होंने एक छोटी-सी वाटिका लगाई थी, बीरबल साहनी ने उसी [illegible] का विशिष्ट प्रकार के पौधे बोतलों आदि में इकट्ठा करके [illegible] किया। जिस प्रकार डा० बसु छुइमुई के पौधे की विचित्रता

से प्रभावित हुए थे, उसी प्रकार बीरबल साहनी को अमलतास के पौधे ने आकर्षित किया। वह तो उसकी खूबसूरती पर ही लट्टू हो गए थे। वैज्ञानिक परिभाषा में इसको कैसियाफिस्टूला (इण्डियन लवरनम) कहते हैं। वैसे जनसाधारण में इसका नाम 'गोल्डन शावर' प्रसिद्ध है। इसके पीले-पीले फूलों की पंखुड़ियां जब उसके नीचे बिछी हुई दिखाई देती हैं तो ऐसा प्रतीत होता है कि स्वर्ण की छोटी-छोटी टिकियां बिखरी पड़ी हैं। शायद सोने में सुगन्ध की बात इसी वृक्ष से ली गई हो। क्योंकि सोने में किसी प्रकार की महक नहीं होती, जबकि अमलतास के फूल एक विशेष प्रकार की महक से अपने आसपास के वातावरण को मोहक बना देते हैं।

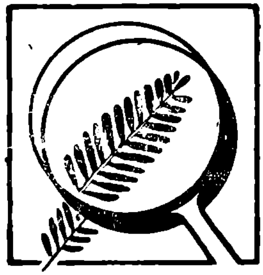
बीरबल साहनी अपने भाई-बहनों में तीसरे नंबर पर थे। परन्तु घर में उनका सम्मान प्रायः अपने भाई-बहनों में सबसे अधिक था। इसका कारण यह है कि जब भी कभी परिवार के बच्चों में कोई वाद-विवाद उठ खड़ा होता तो सब की आशा यही रहती कि बीरबल इस झगड़े को निपटाने में निष्पक्ष मध्यस्थ की तरह काम करेंगे।

प्रायः ऐसा देखा जाता है कि इस प्रकार के बुद्धिमान बच्चे या तो गुमसुम बने घर के एक कोने में पढ़ते रहते हैं और उन्हें खेलों, हंसी-मजाक आदि में कोई विशेष रुचि नहीं रहती। दूसरा रूप यह भी होता है कि इस प्रकार के बच्चे अत्यधिक शरारतें करते और घर के लिए सिरदर्द बन जाते हैं। परन्तु बीरबल साहनी में इस प्रकार की कोई बात न थी। वह पढ़ते-लिखते भी बड़ा मन लगाकर थे, खेलों में भी रुचि लेते थे और घर के भाई-बहनों में मिलकर हास-परिहास भी खूब करते थे। इसका प्रमाण यह है कि जब वह लाहौर से शिक्षा समाप्त करके इंग्लैंड पढ़ने गए तो वह वहां टेनिस आदि खेलों में भाग लेते थे। इसी प्रकार वह परिवार में भी हंसते खेलते, अपने भाई-बहनों में अगुआ बने रहते थे। कभी-कभी वह इस प्रकार का उपद्रव भी कर बैठते, जिससे

उनके पिता रुचिराम साहनी को उलझन में पड़ना पड़ता, परन्तु इस प्रकार की शरारतों में भी एक विशिष्ट प्रकार का बुद्धि-चातुर्य प्रकट होता था।

बचपन से ही बीरबल साहनी अपनी दयालुता के लिए भी प्रसिद्ध थे। प्रायः बच्चों में झगड़े हो जाया करते हैं और उन्हें निपटाने के लिए माता-पिता के पास लाया जाता है, परन्तु उनके भाई-बहनों में हुए झगड़े अथवा कोई उत्पन्न समस्या का समाधान बीरबल साहनी को ही करना पड़ता था। ऐसा प्रतीत होता है कि छोटी-सी आयु में ही उनमें एक विशेष प्रकार की बुद्धिमत्ता प्रकट होने लगी थी।

वस्तुतः बीरबल साहनी में इस प्रकार की उदारता और उदार भावनाओं के पैदा होने का कारण यह था कि उनके पिता रुचिराम साहनी रसायन विज्ञान पढ़ने के लिए जब कलकत्ता गए तो उनका वहां ब्रह्मसमाज से संपर्क हुआ। उन दिनों ब्रह्मसमाज एकमात्र ऐसी संस्था थी, जो स्त्रियों के प्रति बहुत उदार भावनाएं रखती थी। यूं तो आर्यसमाज भी स्त्रियों की शिक्षा-दीक्षा के लिए प्रयत्नशील था, परन्तु पंजाब से बाहर शिक्षित व्यक्तियों पर ब्रह्मसमाज के विचारों का अधिक प्रभाव था। इसलिए रुचिराम साहनी के घर में भी उदार भावनाओं का विकास हुआ। इसका स्पष्ट प्रमाण यह है कि उन्होंने उस समय की परंपराओं को ताक में रखकर अपनी पुत्रियों को अंग्रेजी शिक्षा दिलवाई और उस समय की परंपरा के अनुरूप छोटी आयु में विवाह आदि न किया। संभवतः लाहौर में रुचिराम साहनी की पुत्री ही प्रथम लड़की थी जिसने बी० ए० पास किया था। इस प्रकार की उदार भावनाओं का बीरबल साहनी पर भी प्रारंभ से हो प्रभाव पड़ा।



इंग्लैंड में

स्कूल की प्रारंभिक शिक्षा समाप्त करने के बाद बीरबल साहनी ने पंजाब विश्वविद्यालय से स्नातक की डिग्री प्राप्त की। जैसा कि पहले लिख चुके हैं प्रो० रुचिराम साहनी ने अपने सभी पुत्रों को उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए इंग्लैंड भेजा था। बीरबल साहनी भी 1911 में पंजाब विश्वविद्यालय छोड़ कर कैम्ब्रिज के इमानुअल कालेज में भर्ती हुए।

प्रो० रुचिराम साहनी ने ब्रह्मसमाज से संपर्क के कारण उच्च शिक्षा तथा उदार भावनाओं के प्रति रुचि पैदा हुई थी और यही कारण था कि उन्होंने न केवल अपने पांचों पुत्रों को इंग्लैंड पढ़ने के लिए ही भेजा बल्कि स्वयं भी विशिष्ट अध्ययन और अन्वेषण कार्य के लिए इंग्लैंड गए। मानचेस्टर में उन्होंने कैम्ब्रिज के प्रोफेसर रदरफोर्ड तथा कोपनहेगन नाइल्सबोर के साथ रेडियोधर्मिता पर अन्वेषण कार्य किया। बीरबल साहनी को विज्ञान के प्रति रुचि और जिज्ञासा अपने पिता के प्रेरणात्मक कार्यों के कारण ही मिली।

1914 में कैम्ब्रिज से शिक्षा समाप्त करने के फौरन बाद वहां के सुप्रसिद्ध वनस्पति विज्ञान शास्त्री प्रो० स्टुअर्ट के निर्देशन में अनुसन्धान कार्य प्रारंभ कर दिया।

बीरबल साहनी ने 1919 में डाक्टरेट की उपाधि के लिए एक शोधपत्र पेश किया। यह शोधपत्र प्रस्तरी भूत वृक्षों के संबंध में था। वस्तुतः बीरबल साहनी को वनस्पति विज्ञान के प्रति इतना प्रेम और भारत के अधिकांश पौधों के संबंध में उन्हें विशेष ज्ञान था, यही कारण था कि उस समय भारत के विभिन्न पाठ्यक्रमों में वनस्पति विज्ञान से संबंधित लाऊसम की जो पुस्तक पढ़ाई जाती थी उनसे उसमें संशोधन के लिए कहा गया। इस कार्य से वनस्पति विज्ञान के संबंध में उनकी रुचि और विशिष्ट ज्ञान का प्रमाण मिलता है।

वनस्पति विज्ञान में उनकी रुचि और उसके प्रति उनकी निष्ठा का एक सबसे बड़ा प्रमाण उनकी आजीविका से संबंधित भी है।

शिक्षा समाप्ति पर बीरबल साहनी के कार्यक्षेत्र में प्रवेश के समय उनके पिता यह चाहते थे कि वे आई० सी० एस० बनकर इण्डियन सिविल सर्विस में किसी ऊंचे पद पर कार्य करें। इसलिए प्रो० रुचिराम साहनी ने इस संबंध में योजना बनाई और उनसे इस संबंध में तैयारी करने के लिए कहा।

कुछ देर तक पिता और पुत्र में मौन बना रहा, कोई कुछ न बोला। कुछ देर बाद जब पिताजी ने पूछा कि तुम चुप क्यों रह गए, तो बीरबल साहनी ने कहा, "यदि इण्डियन सिविल सर्विस में जाने का आपका आदेश है तो मैं जा सकता हूं और यदि आपको मेरी इच्छा और रुचि के संबंध में कुछ ध्यान रखना है तो मैं वनस्पति विज्ञान पर ही कार्य करना चाहूंगा। उसी का अनुसंधान और अध्यापन कार्य ही मेरे प्रिय विषय हो सकते हैं।"

घर में फिर एक बार सन्नाटा-सा पैदा हो गया।

यह बात ठीक है कि प्रो० रुचिराम साहनी ने आज तक अपनी इच्छा जबरदस्ती अपनी किसी संतान पर न लादी थी, परन्तु यह

भी न हुआ था कि किसी ने उनकी आज्ञा के विपरीत कोई कार्य किया हो। स्थिति इस समय भी बिल्कुल वैसी ही थी। बीरबल साहनी का यही कहना था कि यदि आपकी आज्ञा है तब तो मैं इसे शिरोधार्य करूंगा। यदि आप मेरी रुचि का ध्यान रखते हैं तो मुझे वनस्पति विज्ञान में ही कार्य करने दीजिए।

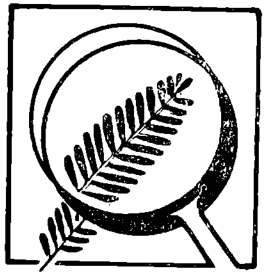
पिताजी कुछ समय के लिए आश्चर्य में तो अवश्य पड़े, परन्तु कुछ देर बाद विचार कर वह बोले, "अच्छा, जैसी तुम्हारी रुचि हो, वही कार्य करो।" इससे स्पष्ट है कि उनके घर में अनुशासन-प्रियता का महत्व तो था परन्तु जीवन से संबंधित बहुत-सी बातें पुत्रों पर ही छोड़ दी जाती थीं कि वे स्वतंत्रतापूर्वक जैसा चाहें करें। यहां अनुशासन भी केवल सुझाव के रूप में ही होता था।

इसका कारण यही है कि प्रो० रुचिराम साहनी ने स्वयं अपना जीवन अपने विचारों के अनुरूप बनाया था और उसमें सफलता भी प्राप्त की थी। उनका संबंध पंजाब ही नहीं संपूर्ण भारत के ऐसे विशिष्ट व्यक्तियों से था जो सफलता के उच्चतम शिखर पर पहुंचे थे। इन सब बातों का परिणाम यही था कि परिवार में उदार भावनाएं एक धरोहर के रूप में मानी जाती थीं।

यहां एक और बात कह देना अनुपयुक्त न होगा, क्योंकि इसका परिवार की भावनाओं से भी बहुत घनिष्ठ संबंध है।

प्रो० रुचिराम साहनी ब्रह्मसमाज की विचार-धारा से प्रभावित थे और यही कारण था कि वह पुराने रीति-रिवाजों को न मानते थे और न महत्व देते थे। वह प्रगतिशील व्यक्ति थे। उनका जाति-पाति में कोई विश्वास न था। इसीलिए उन्होंने अपने सबसे बड़े बेटे डा० विक्रम साहनी का विवाह अपनी जाति से बाहर कर दिया था और उन्होंने इस बात के लिए जात-बिरादरी वालों को चुनौती दी थी कि जिसमें दम हो वह मुझे जात-बिरादरी से अलग करे।

अपनी संतान को उच्च शिक्षा देना भी उसी उदार प्रवृत्ति का द्योतक है।



कार्यक्षेत्र में प्रवेश

शिक्षा समाप्ति अथवा विशिष्ट तैयारी के बाद प्रत्येक व्यक्ति को कार्यक्षेत्र में कूदना ही पड़ता है।

1919 में श्री बीरबल साहनी कैम्ब्रिज से शिक्षा समाप्त करके जब भारत लौटे तो बनारस विश्वविद्यालय में उन्हें वनस्पति विज्ञान विभाग में प्रोफेसर का पद प्राप्त हो गया। कुछ अज्ञात कारणों से वे यहां अधिक न टिक सके और एक वर्ष पढ़ाने के बाद ही 1920 में पंजाब विश्वविद्यालय चले गए। परन्तु पंजाब विश्वविद्यालय में भी यही स्थिति हुई, केवल एक साल तक ही यहां वनस्पति विज्ञान पढ़ा सके।

अन्तत: उन्हें 1921 में लखनऊ विश्वविद्यालय में वनस्पति विज्ञान पढ़ाने के लिए प्रोफेसर नियुक्त किया गया। संभवत: यह स्थान उनके लिए अधिक अनुकूल सिद्ध हुआ और 1949 में मृत्यु-पर्यन्त वे वहीं कार्य करते रहे।

विद्यार्थियों में लोकप्रिय

लखनऊ विश्वविद्यालय में आने के फौरन बाद उनका सबसे

पहला कार्य विज्ञान के पाठ्यक्रम में परिवर्तन कराने का था। वे ऐसे परिवर्तन चाहते थे कि जो समय के अनुकूल होने के साथ छात्रों के लिए उपयोगी भी हों।

विश्वविद्यालय में आने के पश्चात् उनका दूसरा महत्वपूर्ण कार्य यह था कि वे बी० एस-सी० की कक्षाएं स्वयं लेने लगे। प्रायः ऐसा होता है कि एम० ए की कक्षाएं पढ़ाने वाले प्रोफेसर बी० ए० अथवा बी० एस-सी० की कक्षाएं प्रायः नहीं लेते। इस संबंध में उनका तर्क यह था कि इस प्रकार एक तो छात्रों से संबंध बना रहता है और छात्रों में अनुशासन की भावना जागृत होती है। उन्होंने बी० एस-सी० के साथ एम०एस-सी० की कक्षाएं पढ़ाना और उनकी शिक्षा का संचालन करना भी आरंभ किया।

यही कारण था कि बीरबल साहनी छात्रों में बड़े लोकप्रिय थे।

किसी भी अध्यापक की छात्रों में लोकप्रियता का सबसे बड़ा कारण यह होता है कि अध्यापक का अपने विषय पर पूर्ण अधिकार हो। सभवतः बहुत से लोग इस ओर ध्यान नहीं देते। अध्यापक का अपने विषय पर जितना अधिक अधिकार होगा छात्र उससे उतने ही अधिक नियंत्रित रहेंगे और उतना ही अधिक आदर करेंगे। इसके साथ ही यदि अध्यापक में उदार भावनाएं और पढ़ाने का ढंग, छात्रों के प्रति व्यवहार आदि ऐसी बातें हैं जो छात्रों में अनुशासन और अध्यापक के प्रति सम्मान भावना की प्रेरक हैं।

बीरबल साहनी के पढ़ाने का ढंग बहुत ही स्पष्ट, सरल और सीधा था। वनस्पति विज्ञान में चित्रों द्वारा छात्रों को समझाना आवश्यक होता है। प्रो० साहनी का ढंग यह था कि वे किसी विषय की प्रमुख बातें पहले स्पष्ट कर देते थे। और उसके साथ-साथ ब्लैकबोर्ड पर पौधे का चित्र भी बनाते जाते थे। विषय पढ़ाते समय वह वनस्पति के विभिन्न अंगों आदि पर प्रकाश डालने वाले सिद्धांतों का वर्णन तो करते ही थे, साथ-ही-साथ उसके संबंध में

देश-विदेश में हुए अन्य अनुसंधानों का विवरण भी देते रहते थे।

विज्ञान में ही नहीं, प्रायः अन्य विषयों को पढ़ाते समय अध्यापक को उदाहरण आदि देकर अपना विषय स्पष्ट करना पड़ता है। यह बात ठीक है कि श्रेष्ठ अध्यापक कक्षा में जाने से पूर्व अपने विषय की पूरी तैयारी करता है और उदाहरण आदि के लिए संदर्भ ग्रंथ आदि भी अपने साथ रखता है। परन्तु बीरबल साहनी की स्मरण शक्ति इतनी तेज़ थी कि वह उदाहरण बिना पुस्तकों की सहायता के ही पेश करते रहते थे।

अध्यापक के लिए यह भी आवश्यक होता है कि वह जिस भाषा में विषय पढ़ाता है, उस भाषा पर उसका पूरा अधिकार हो। भाषा और विषय पर पूर्ण अधिकार प्राप्त अध्यापक ही विषय को बहुत सरल बना कर पढ़ाने में समर्थ होता है। डा० साहनी का भाषा पर इतना अधिकार था कि वह विषय को बहुत ही सरल और स्पष्ट बना देते थे। छात्रों में उनकी लोकप्रियता का यह भी एक महत्वपूर्ण कारण था।

जिन लोगों ने अथवा छात्रों ने उनके भाषण सुने हैं वे आज भी बताते हैं कि उनका उच्चारण इतना शुद्ध था और भाषा में इतनी मिठास थी कि कक्षा में तो छात्रों में रुचि उत्पन्न होती ही थी, अन्य स्थानों पर भी जब कभी वे भाषण करने जाते, श्रोताओं को उसमें एक विशिष्ट आकर्षण प्रतीत होता। यही कारण था कि उन्हें देश-विदेश में अनेक बार भाषण करने के लिए आमंत्रित किया गया था।

लखनऊ विश्वविद्यालय को देन

वनस्पति विज्ञान का भू-विज्ञान से भी संबंध है। यूं तो आप जानते हैं कि विज्ञान का कोई भी विषय, विज्ञान की अन्य शाखाओं से अलग-थलग नहीं किया जा सकता, परन्तु वनस्पति विज्ञान के लिए भू-विज्ञान का ज्ञान होना अत्यंत आवश्यक है।

लखनऊ विश्वविद्यालय में वनस्पति विज्ञान तो काफी समय

से पढ़ाया जा रहा था, परन्तु भू-विज्ञान की ओर किसी का ध्यान न गया था। डा० साहनी ने इस संबंध में विश्वविद्यालय में आने के कुछ दिन बाद ही भू-विज्ञान खोलने के लिए प्रयत्न आरंभ कर दिए थे। कई वर्ष तक वह इस संबंध में लिखा-पढ़ी और प्रयत्न करते रहे तब कहीं जाकर 1943 में यह विभाग खुलवाने में सफल हुए।

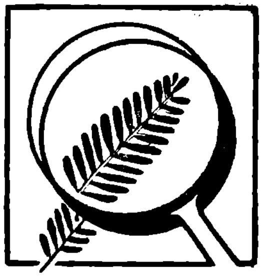
वनस्पति विज्ञान के साथ-साथ भू-विज्ञान विषय भी डा० साहनी को ही पढ़ाना पड़ता था। वह बी० एस-सी० तथा एम० एस-सी० की कक्षाओं को भी यह विषय पढ़ाने लगे।

डा० साहनी की लगन, परिश्रम और छात्रों में विशेष रुचि के कारण ही लखनऊ विश्वविद्यालय उनके समय में देश भर के वनस्पति विज्ञान के छात्रों का आकर्षण केन्द्र बन गया था। जिस प्रकार कलकत्ता विश्वविद्यालय भौतिक और रसायन विज्ञान आदि के लिए प्रसिद्ध हो गया था, उसी प्रकार उत्तर-भारत में वनस्पति विज्ञान की पढ़ाई के लिए लखनऊ विश्वविद्यालय को विशेष महत्व प्राप्त हो गया था। प्रो० साहनी की प्रसिद्धि के कारण ही भारत के सभी स्थानों से अनेक छात्र वहां आने के लिए लालायित रहते थे। उनका प्रयत्न रहता था कि शिक्षा के साथ-साथ विज्ञान के छात्रों में अनुसंधान के प्रति भी प्रबल रुचि उत्पन्न की जाए। जिस प्रकार वह स्वयं अनुसंधान कार्य के प्रति समर्पित थे, उसी प्रकार वह यह भी चाहते थे कि उनसे संबंधित छात्र भी अनुसंधान को भी उतना ही महत्व दें, क्योंकि यह तो सभी वैज्ञानिक जानते हैं कि अनुसंधान के बिना विज्ञान का कोई विशेष महत्व नहीं रह जाता। अनुसंधान के बिना वह केवल एक सैद्धान्तिक चीज़ रहती है, क्रियात्मक रूप में उसका कोई प्रयोग नहीं होता।

विज्ञान से संबंधित सभी विश्वविद्यालयों में उन दिनों एक समस्या उपकरणों के अभाव की रहती थी। पुस्तकें और पत्र-पत्रिकाओं की कमी की भी शिकायत रहती थी। बीरबल साहनी

के सामने भी इस प्रकार की समस्या थी। अपने विश्वविद्यालय में उन्हें भी किसी कार्य के लिए ग्रान्ट आदि में काफी समय लगता था। इस विश्वविद्यालय में आने के कुछ समय बाद ही बीरबल साहनी ने जीवाश्म काटने के यंत्रों की खरीद के लिए आवश्यक सहायता देने की मांग की थी, परंतु उनकी यह मांग सन् 1932 में जाकर स्वीकृत हुई।

प्रत्येक वैज्ञानिक के सामने विज्ञान की शाखाओं के अध्ययन और समस्याओं के समाधान के लिए अनेक कठिनाइयां आती हैं। यही कारण है कि वैज्ञानिक अपना बहुत-सा समय प्रयोग-शाला में बिता देते हैं। ऐसी समस्याओं के संबंध में डा० साहनी का दृष्टिकोण यह था कि विज्ञान की एक शाखा की समस्या का हल विज्ञान की किसी अन्य शाखा की विधि से निकाला जा सकता है। इससे यह बात पुनः सिद्ध हो जाती है कि विज्ञान के किसी भी अंग को पूर्णतया अलग-थलग नहीं किया जा सकता।



वैज्ञानिक प्रतिभा

जैसाकि हमने पूर्व अध्याय में बताया, डा० साहनी वनस्पति विज्ञान से संबंधित किसी शाखा की समस्या का समाधान विज्ञान की किसी दूसरी शाखा की विधि से करते थे। इसका मतलब यह है कि वे विज्ञान को समग्र रूप में ग्रहण करते थे। उन्होंने विज्ञान की किसी भी शाखा को संपूर्ण विज्ञान से पृथक् नहीं माना।

1919 में कैम्ब्रिज से भारत लौटने पर डा० साहनी ने पुरा-वनस्पति विज्ञान के संबंध में देश में होने वाले कार्यों तथा अध्ययन-अध्यापन की संभावनाओं का पता लगाया। उन्होंने पाया कि भारत इस संबंध में बहुत महत्वपूर्ण स्थान हो सकता है और संभवतः यही कारण था कि उन्होंने विदेश जाकर जीविकोपार्जन के लिए अध्यापन कार्य करना उचित न समझा। नहीं तो उन जैसे मेधावी व्यक्ति के लिए विदेश जाकर अधिक समृद्धि और प्रसिद्धि प्राप्त करना कोई कठिन कार्य न था। परन्तु उनके इस दृढ़ निश्चय से ही उन्हें भारत में रह कर कार्य करके भी अन्तर्राष्ट्रीय स्तर का वैज्ञानिक कहलाने में देर न लगी।

1922 में उन्हें भारतीय विज्ञान शाखा का अध्यक्ष चुना गया। भारत में पुरा-वनस्पति विज्ञान की वर्तमान स्थिति पर भाषण करते हुए उन्होंने कहा था कि इस विषय में मेरी रुचि होने के कारण मैं देशवासियों का ध्यान इस ओर विशेष रूप से खींच सकूंगा। उन्होंने इस भाषण में यह सिद्ध किया था कि इस देश में भी इस दिशा में मौलिक अनुसंधान करने के भरपूर क्षेत्र और संभावनाएं विद्यमान हैं। यह बात भी सिद्ध करती है कि वह देश के प्रति और विज्ञान की एक महत्वपूर्ण शाखा के प्रति कितने अधिक समर्पित थे।

जैसाकि हमने अभी बताया कि उनके अनेक वर्षों के प्रयत्न के कारण लखनऊ विश्वविद्यालय में भू-विज्ञान विभाग आरंभ किया गया और उस विभाग का अध्यक्ष भी डा० साहनी को ही बनाया गया।

डा० साहनी की लोकप्रियता और विज्ञान के प्रति समर्पण भावना के कारण ही लखनऊ विश्वविद्यालय में ही वह समय आया, जब उन्हें पूरे विज्ञान विभाग का डीन नियुक्त किया गया और अंत तक वह इस पद पर बने रहे।

डा० साहनी का मत था कि पेड़-पौधों के प्रस्तरीभूत स्वरूप के अध्ययन से इतिहास के महत्वपूर्ण तथ्यों का भी सही-सही ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। इस संबंध में उन्होंने अनेक महत्वपूर्ण अनुसंधान किए। इतिहास के विद्वान यह मानते हैं कि भारत, अफ्रीका, अमेरिका के बहुत से भाग और आस्ट्रेलिया किसी समय एक बड़े महाद्वीप का स्वरूप थे। विशेष प्राकृतिक उथल-पुथल के कारण इस महाद्वीप की बहुत-सी भूमि समुद्र-गर्भ में समा गई और इस महाद्वीप के टुकड़े हो गए। डा० साहनी ने महाद्वीपों के इस विभाजन सिद्धांत का अध्ययन प्रस्तरीभूत पेड़-पौधों और उनके विभिन्न अंगों द्वारा किया।

इसी प्रकार उन्होंने हड़प्पा-मोहन जोदड़ो व सिन्धु घाटी की सभ्यता के संबंध में भी अनेक परिणाम निकाले। उन्होंने वहां

चावल तथा अन्य खाद्यान्नों के उत्पादन से पूर्व की स्थिति का अध्ययन किया। हड़प्पा में उन्हें कुछ ऐसे वृक्षों के अवशेष प्राप्त हुए जिनसे यह सिद्ध होता था कि इस प्रदेश का भारत के अन्य पहाड़ी क्षेत्रों से भी व्यापार आदि का संबंध था।

डा० साहनी को एक बार पंजाब विश्वविद्यालय ने विभिन्न स्थानों पर भाषण करने के लिए आमंत्रित किया। इस मध्य उन्हें रोहतक (हरियाणा) भी जाना पड़ा। रोहतक से कुछ दूरी पर एक टीला है जिसे खोखरा कोट के नाम से पुकारते हैं। पंजाब विश्वविद्यालय के कुछ अधिकारियों ने उनका ध्यान इस ओर खींचा। पुरा-वनस्पति विज्ञान विशेषज्ञ डा० साहनी ने उस टीले के एक भाग पर हथौड़ा मारा और वहां से प्राप्त अवशेषों से उन्होंने यह सिद्ध किया कि यहां जो जाति किसी समय रहती थी वह विशेष प्रकार के सिक्के बनाना जानती थी और वहां से सिक्के ढालने के सांचे प्राप्त किए। संयोग को बात है कि कुछ सांचों में सिक्के विद्यमान भी थे। इन सिक्कों पर जो चिह्न विद्यमान थे, उनके संबंध में उन्होंने डा० काशीप्रसाद जायसवाल से उन चिह्नों अथवा लेखों को स्पष्ट करने की प्रार्थना की। डा० जायसवाल ने उनके अध्ययन से यह पता लगाया कि यह सिक्के महाभारत कालीन यौधेय लोगों के थे। इतिहास इस बात का साक्षी है कि यौधेय लोगों ने महाभारत के युद्ध में भाग लिया था।

डा० वासुदेवशरण अग्रवाल ने भी इस बात की पुष्टि की और उन्होंने कहा कि वे यौधेयों के सिक्कों के संबंध में एक शताब्दी से बातें सुनते आ रहे थे परन्तु प्रत्यक्ष प्रमाण डा० साहनी के प्रयत्नों से ही मिला।

डा० साहनी के हथौड़े की इस चोट ने इतिहास के अन्य अनेक तथ्यों को भी उजागर कर दिया। डा० साहनी ने इस संबंध में अपने शोध-पत्र में एक विशेष बात यह भी सिद्ध की कि लुधियाने के निकट सनेत नामक स्थान पर प्राप्त अवशेषों के संबंध में डा० हार्वे ने 1884 में उन्हें उस समय के सिक्के बताया था।

जबकि डा॰ साहनी ने यह सिद्ध किया कि यह सिक्के न होकर सिक्के बनाने के सांचे थे। और सनेत नामक स्थान पर यौधेय प्रजातंत्र की नई टकसाल रही होगी।

जैसाकि हमने प्रारंभ में बताया कि डा॰ साहनी विज्ञान को एक समग्र रूप में ग्रहण करते थे। इसमें सन्देह नहीं कि वे स्वयं पुरा-वनस्पति विशेषज्ञ थे, परन्तु उनका विश्वास था कि वैज्ञानिकों को अथवा विज्ञान से संबंधित छात्रों को विज्ञान से संबंधित सभी शाखाओं में अनुसंधान के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए तथा उनमें स्वयं भी इस बात के प्रति रुचि होनी चाहिए। यही कारण था कि वनस्पति विज्ञान से संबंधित अनेक क्षेत्रों में भी उन्होंने अनुसंधान कार्य द्वारा प्रगति की और अपने छात्रों को ऐसा करने की प्रेरणा दी।

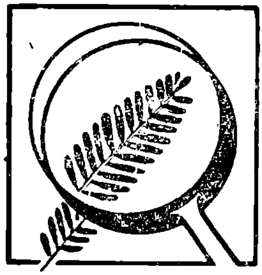
अनुसंधान कार्य के प्रति उनके प्रेम का एक स्पष्ट प्रमाण यह है कि उन्होंने अपने पिता प्रो॰ रुचिराम साहनी के नाम से वनस्पति विज्ञान में विशिष्ट अनुसंधान के लिए पुरस्कार की भी घोषणा की। यह पुरस्कार उन्होंने लखनऊ विश्वविद्यालय द्वारा दिए जाने वाले उस भत्ते से प्रारंभ किया जो उन्हें संपूर्ण विज्ञान विभाग का डीन होने के नाते प्राप्त होता था। यह पुरस्कार प्राप्त करने वाले व्यक्तियों में अनेक सुप्रसिद्ध वनस्पति विज्ञान शास्त्री हैं।

लखनऊ विश्वविद्यालय में भू-विज्ञान प्रारंभ करना उनकी वैज्ञानिक प्रतिभा का ही एक प्रमाण था, भू-विज्ञान ही ऐसा विषय है जिससे अतीत के पौधों की परिस्थितियों का संबंध पौधे की वर्तमान स्थिति से निर्धारित किया जा सकता है। भू-विज्ञान और वनस्पति विज्ञान दोनों का ही मत है कि पेड़-पौधों के जीवाश्मों से केवल यही नहीं ज्ञात होता कि कोई विशेष प्रकार का पौधा या पेड़ कब पैदा हुआ, किस प्रकार विकसित हुआ तथा किस प्रकार की धरती में उसका विकास संभव हुआ, परन्तु इसके साथ-साथ उन दिनों विज्ञान की शाखाओं से यह भी स्पष्ट होता है कि कोई विशिष्ट पौधा विकास के किन चरणों में से गुजरा। जिस

प्रकार डारविन के सिद्धांत ने यह सिद्ध किया कि प्राणियों का विकास एक विशिष्ट क्रम के अनुसार हुआ, उसी प्रकार उन्होंने यह भी सिद्ध किया कि प्रारंभ में वनस्पति का केवल जलीय स्वरूप था और वनस्पति जगत की आधुनिक स्थिति का विकास 6-7 करोड़ वर्ष पूर्व ही होना प्रारंभ हुआ।

इस संबंध में डा० साहनी सरल भाषा में स्पष्टीकरण करते हुए कहते हैं कि विभिन्न स्तरों का अन्तर पुरा-वनस्पति विज्ञान द्वारा जीवाश्म अवशेषों द्वारा बताया जा सकता है। उनका तो यहां तक कहना है कि इन अवशेषों की सहायता से किसी घटना के सप्ताह के दिनों तक का अनुमान लगाया जा सकता है।

यदि देखा जाए तो पुरा-वनस्पति विज्ञान बहुत ही मनोरंजक विज्ञान है परन्तु डा० साहनी द्वारा इसे अपनाये जाने का एक अन्य कारण प्राचीन भारत की संस्कृति, सभ्यता और स्थिति का पता लगाना भी था तथा भारतीय सभ्यता को पिछड़ा माने जाने की लचर दलील का खण्डन करना भी।



सुरुचिपूर्ण व्यक्तित्व

डा० बीरबल साहनी का जीवन अनेक वैज्ञानिकों के समान शुष्क और नीरस न था। वह एक संपूर्ण और सुरुचिपूर्ण व्यक्तित्व के स्वामी थे। कुछ तो उनके विज्ञान का विषय ही प्रकृति से संबंधित था और उसके साथ ही स्वाभाविक रूप से उन्हें प्रकृति से बहुत प्रेम था। वह वैज्ञानिक होते हुए भी सदैव पहाड़ों-झरनों, नदी-नालों से संबंधित रहे।

भारत एक ऐसा देश है जहां प्रत्येक प्रकार की जलवायु और सभी प्रकार के स्थान विद्यमान हैं। यहां मीलों लंबे रेगिस्तान के मैदान हैं तो दूसरी ओर पहाड़ों की लंबी शृंखलाएं। एक ओर खानें हैं तो दूसरी ओर सुन्दर चरागाहें। भारतीय मैदानों में नदियां अठखेलियां करती हुई बहती हैं और विशाल भू-भाग को उपजाऊ बनाती हैं। यहां के अनेक दर्शनीय स्थान इसे एक अनोखा मोहक रूप प्रदान करते हैं। पूर्वोत्तर प्रदेश में दार्जिलिंग की सुन्दर पर्वतमालाएं हैं तो उत्तर-भारत भी हिमालय की अनेक शृंखलाओं से परिपूर्ण है।

डा० साहनी को बचपन से ही पैदल लंबी यात्राओं का शौक था। उनके मूल स्थान भेरा के पास खेवड़ा नामक नमक की पर्वत मालाएं थीं जो अब पाकिस्तान के हिस्से में हैं। जैसाकि हम पहले बता चुके हैं परिवार द्वारा लाहौर में बस जाने पर भी भेरा से इनका संबंध न टूटा था, इसलिए जब कभी यह लोग भेरा आते तो बीरबल साहनी नमक की खेवड़ा पर्वतमालाओं में घूमने निकल जाते। पर्वतों की यात्रा का यह शौक भी कम या अधिक अपने पिता से ही प्राप्त हुआ था और इसी से संभवतः पुरा-वनस्पति विज्ञान और भू-विज्ञान के संबंध में एक विशेष रुचि जागृत हुई थी। क्योंकि उन्हें नमक की इस पर्वतमाला में बहुत-सी ऐसी पहाड़ियां नजर आईं थीं जिनमें अनेक प्रकार के वृक्षों के अंश पथराए हुए पाए गए थे। वास्तव में यह स्थान भू-विज्ञान का अध्ययन करने वालों के लिए एक संग्रहालय और अनुसंधान-शाला के रूप में था। उन्होंने वर्षों पश्चात इस क्षेत्र के काल निर्धारण के संबंध में बहुत महत्वपूर्ण कार्य किया था।

प्रो० रुचिराम साहनी स्वयं लंबी यात्राओं के लिए उत्सुक रहते थे और उनकी सदैव यह इच्छा रहती थी कि वे अपने बच्चों को भी अपने साथ इन यात्राओं पर ले जायें और वे प्रायः ले भी जाते थे।

बीरबल साहनी ने युवक के रूप में उत्तर भारत के अनेक पहाड़ी दर्रों और पर्वतमालाओं की यात्रा की थी। उनमें जम्मू-कश्मीर, हिमाचल और पंजाब के शायद ही किसी ऐसे स्थान को छोड़ा हो, जिसकी उन्होंने यात्रा न की हो। वे तिब्बत तक पैदल यात्रा करते हुए गए।

इंग्लैण्ड जाने से पूर्व वह जोजिला दर्रे के पास मचोई नामक ग्लेशियर की यात्रा पर थे। जहां से उन्हें लाल शैवाल प्राप्त हुआ था, जिसे वे अपने साथ कैम्ब्रिज ले गए थे, जिस पर कैम्ब्रिज के वनस्पति विज्ञान विभाग के प्रोफेसर ने अनेक प्रकार के परीक्षण किए थ।

इस प्रकार के जोखिम भरे स्थानों की यात्रा करना कठिन होता है। अनेक बार डा० साहनी ने दुर्घटनाग्रस्त पशुओं आदि के पथराए हुए शरीर देखे थे और वह स्वयं भी कई बार इस प्रकार के संकटों से बचे भी थ। यह सब जानते हैं कि पहाड़ की चोटी पर से नीचे खड्ड में गिरने पर क्या स्थिति होती है इसका अनुमान इस प्रकार के प्रत्येक सैलानी को होता है। उनके साथ भी अनेक अवसर ऐसे आये जब उन्हें भयंकर प्रकार की यात्रा-मुसीबतों का सामना करना पड़ा। एक बार श्रीनगर से ऊपर पर्वतमालाओं की यात्रा करते समय शाम के समय पड़ाव डालने पर वे अपनी पत्नी तथा साज-समान के साथ भयंकर बर्फीले तूफान में फंस गये थे, परन्तु उन्होंने कभी भी वैज्ञानिक यात्री के रूप में उत्साहपूर्ण भावना का त्याग नहीं क्रिया और सदा सकुशल इन यात्राओं से लौटते रहे।

डा० साहनी की इस प्रकार की यात्राएं अनेक हैं। भारत में ही नहीं, वे विदेशों में भी व्याख्यान तथा गोष्ठियों में भाग लेने के लिए अनेक बार विदेश गए। इस प्रकार की यात्राएं वह केवल मनोरंजन के लिए न करते थे, परन्तु इनसे उन्हें अपने विज्ञान विषय के प्रति प्रेरणा और सामग्री भी प्राप्त होती थी। वस्तुतः यह भारत के अनेक वैज्ञानिकों के लिए एक शुभ-चिन्ह था कि उनमें से प्रायः सभी उन्मुक्त प्रकृति के प्रेमी थे और उन्होंने कभी भी प्रकृति का साहचर्य नहीं छोड़ा।

डा० बीरबल साहनी वनस्पति विज्ञान के साथ-साथ अन्य अनेक विषयों में भी रुचि रखते थे और उनमें पारंगत भी थे। उन्हें कला से बहुत प्रेम था। वनस्पति विज्ञान में विभिन्न प्रकार के पेड़-पौधों, फूल-पत्तियों आदि के रेखाचित्र बनाते-बनाते उन्हें चित्र-निर्माण के प्रति रुचि उत्पन्न हो गई थी। इसके साथ ही वे मिट्टी की भी बहुत अच्छी मूर्तियां बना सकते थे।

प्रकृति-प्रेमी डा० साहनी संगीत के भी बहुत शौकीन थे। वे एक कुशल सितार वादक व वायलिन वादक थे।

बहुमुखी प्रतिभा के धनी इस वैज्ञानिक ने खेल-कूद का बहिष्कार नहीं किया था। वे अपने बचपन, स्कूल अथवा कालेज के दिनों से ही हॉकी और टेनिस के बहुत अच्छे खिलाड़ी थे। वे कैम्ब्रिज में भी भारतीय टीम की ओर से टेनिस खेला करते थे।

डा० साहनी के जीवन का जितना भी गहन अध्ययन किया जाये, उससे उनकी अन्य अनेक विशेषताओं का पता चलता है। डा० साहनी केवल वैज्ञानिक और उच्चकोटि के विद्वान ही नहीं थे, वरन् वे देशभक्ति के विचारों से ओत-प्रोत भी थे। इसका सबसे बड़ा उदाहरण यह है कि उन्होंने इंग्लैंड में अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त करने के बावजूद भारत आते ही अंग्रेजी वेशभूषा को एकदम तिलांजलि दे दी और विशुद्ध खादी के वस्त्र पहनने लगे।

यह ठीक है कि देशभक्ति की भावना से ओत-प्रोत व्यक्तियों ने अनेक कष्ट सहे और ब्रिटिश सरकार की जेलें भरीं, परन्तु दूसरी ओर भारत को विज्ञान के क्षेत्र में प्रमुख स्थान दिलाने वाले डा० बीरबल साहनी, जगदीशचंद्र बसु, मेघनाद साहा, सत्येंद्रनाथ बोस, डा० सी० वी० रामन, आचार्य प्रफुल्लचंद्र राय आदि अनेक विद्वान एवं वैज्ञानिक भी किसी प्रकार कम देशभक्त व्यक्तियों की श्रेणी में नहीं रखे जा सकते। क्योंकि यह देश को उन्नत, आत्मनिर्भर और प्रगतिशील दिशा की ओर ले जाने का बहुत ही महत्वपूर्ण कार्य कर रहे थे।

प्रायः हमारे देश में व्यक्ति के धार्मिक विचारों का केवल अपने लिए महत्व माना जाता है परन्तु वास्तव में जो व्यक्ति धार्मिक प्रवृत्ति के होते हैं यदि वे यह बात भले ही किसी को प्रकट न करें, उनकी इस प्रवृत्ति का आसपास के व्यक्तियों पर बहुत प्रभाव पड़ता है। डा० साहनी भी इसी प्रकार के धार्मिक व्यक्ति थे, जिन्होंने अपने धार्मिक विचारों के संबंध में कभी किसी से चर्चा नहीं की और वे निष्ठापूर्वक अपने कार्य में लगे रहे। वस्तुतः हमें यहां भी यह मानने को विवश होना पड़ता है, व्यक्ति अपने

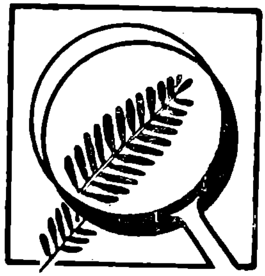
गुणों की अपेक्षा परिस्थितियों से भी प्रभावित होता है। डा० बीरबल साहनी में जहां स्वयं इस प्रकार की प्रवृत्ति विद्यमान थी, वहीं उन्होंने इस दिशा में भी अपने पिता से भी बहुत कुछ ग्रहण किया जो स्वयं सदगुणों की खान थे।

व्यक्ति में इस प्रकार के गुणों का विकास उसकी अपनी दृढ़ता, परिश्रम और ईमानदारी से होता है। पाठक भी यह अनुमान लगा सकते हैं कि प्रायः सभी वैज्ञानिकों के अनुसंधान कार्य में अनेक कठिनाइयां आती हैं। वह उनका निराकरण अपनी दृढ़ता, लगन और परिश्रम से ही करते हैं। इस कार्य में वह किसी को किसी प्रकार धोखा नहीं दे सकता। बीरबल साहनी ने भी अपने अनुसंधान कार्यों में आने वाली कठिनाइयों से कभी हार न मानी। उन्होंने सदैव अपने जीवन को एक चुनौती के रूप में माना। यदि देखा जाये और इस परिवार के जीवन क्रम का अध्ययन किया जाये तो आप पायेंगे कि इस परिवार के प्रायः सभी व्यक्तियों ने अपने जीवन को एक चुनौती के रूप में लिया।

जैसाकि पहले बता चुके हैं कि लाहौर में उनके घर के पास राजनीतिक गतिविधियां बड़ी तेजी से होती थीं। प्रतिदिन जलूसों पर लाठियां चलतीं, अश्रुगैस के गोले छोड़े जाते, घुड़सवार पुलिस उन्हें पैरों तले रौंदने का प्रयत्न करती, इन सब बातों का बीरबल साहनी के जीवन पर प्रभाव कैसे न पड़ता? इसलिए उन्होंने खादी के वस्त्र तो धारण किए ही परन्तु साथ ही देश के प्रति क्रियात्मक दृष्टिकोण ग्रहण किया।

अध्यापक के रूप में बीरबल साहनी का संबंध छात्रों से बहुत ही प्रेमपूर्ण बना रहा। इस संबंध में हम पहले ही वर्णन कर चुके हैं कि विभाग के अध्यक्ष होने के बावजूद डा० साहनी छात्रों के लाभ के लिए ही बी० एस-सी० की कक्षाएं स्वयं पढ़ाया करते थे। इससे उनकी विद्यार्थियों के प्रति रुचि स्पष्ट प्रकट होती है। विद्यार्थियों के लिए उनके कार्यालय और घर के द्वार सदा खुले रहते थे। एक बार किसी कारणवश उन्होंने बी० एस-सी० के छात्रों को स्वयं

पढ़ाना बंद कर दिया। इससे छात्रों में बड़ी खलबली मची और वे कोई उपाय न देख श्रीमती साहनी के पास आये और उन्हें अपनी कठिनाई बताई। श्रीमती साहनी ने जब यह बात अपने वैज्ञानिक पति के सामने रखी तो उन्होंने अगले दिन से ही कक्षाएं लेना प्रारंभ कर दिया।



श्रीमती सावित्री साहनी

हिन्दू धर्मशास्त्रों में पत्नी को पति की अर्धांगिनी माना जात है। उसका पुरुष के जीवन-निर्माण में बहुत बड़ा हाथ होता है। डा० बीरबल साहनी का जीवन भी उनकी पत्नी श्रीमती सावित्री साहनी का वर्णन किए बिना संपूर्ण न हो सकेगा। श्री साहनी जब कालेज की शिक्षा समाप्त कर चुके तो उनकी माता श्रीमती ईश्वर देवी ने यह सोचा कि अब बेटा विवाह के योग्य हो गया तो उसका विवाह कर देना चाहिए। उन्होंने अपने बेटे से इस संबंध में बातचीत की। श्री बीरबल साहनी ने इस संबंध में अपनी माता से केवल यही कहा कि आप जो भी लड़की देखें वह मुझे मंजूर होगी, परन्तु शर्त केवल यह है कि वह अद्वितीय सुन्दरी होनी चाहिए।

प्रो० रुचिराम साहनी के एक मित्र हुआ करते थे, श्री सुन्दर दास सूरी। वह उन दिनों लाहौर में स्कूलों के इंस्पेक्टर होते थे। बाद में सेण्ट्रल टेनिंग स्कूल, लाहौर के प्रिंसिपल पद से रिटायर हुए। प्रो० रुचिराम साहनो और सुन्दर दास सूरी के परिवार

आपस में एक दूसरे से भली प्रकार परिचित थे। बीरबल साहनी की माता ईश्वर देवी के मन में उनकी पुत्री सावित्री के लिए पहले से ही कोमल भावनाएं थीं। वह बहुत सुन्दर लड़की थी। जब उन्होंने सुन्दर दास सूरी से इस संबंध में बातचीत की तो सुन्दरदास जी का कहना यह था कि जिसको बैठे-बिठाये घर में भगवान प्राप्त हो जाए उसे और क्या चाहिए।

उन दिनों बीरबल साहनी बनारस विश्वविद्यालय में वनस्पति विज्ञान के प्रोफेसर थे। माता जी अपने बेटे को सूचना देने के लिए बनारस गईं और अंततः सावित्री और बीरबल साहनी विवाह बंधन में बंध गए।

पहले दिन से ही पति-पत्नी इस प्रकार प्रेमसूत्र में बंध गए कि दूसरों के लिए वे एक आदर्श बन गए। प्रायः लोग कहा करते थे कि यह लोग कितने सुन्दर और आदर्श पति-पत्नी हैं।

पति-पत्नी में इस प्रकार के संबंध होने का कारण यह भी होता है कि दोनों में एक दूसरे के प्रति कितनी निष्ठा और श्रद्धा भावना है। हिन्दू स्त्रियां करवाचौथ के दिन पति की दीर्घायु और मंगल कामना के लिए व्रत रखती हैं। डा० बीरबल साहनी पत्नी की इस निष्ठा के प्रति आदर स्वरूप स्वयं भी व्रत रखते थे। इससे यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि दोनों में एक-दूसरे के प्रति कितना लगाव था।

डा० बीरबल साहनी ने लखनऊ विश्वविद्यालय में विज्ञान विभाग के डीन का पद प्राप्त करने और भारत सरकार द्वारा सम्मान प्राप्त करने पर भी अपनी पत्नी की कभी उपेक्षा नहीं की। वे अन्य कार्यों में तो उनसे परामर्श लेते ही थे, अपने अनुसंधान कार्यों के विषय में भी उन्हें सूचित करते रहते थे।

अपनी पत्नी के प्रति श्री साहनी की रुचि और प्रेम इतना अधिक था कि वह जब कभी बाहर लंबी यात्राओं अथवा सरकारी काम से दौरों आदि पर जाते तो अपनी पत्नी को साथ ले जाते, कभी भी उन्हें पीछे अकेला छोड़ कर न जाते। उन दिनों हवाई-

जहाज से यात्रा का न तो इतना प्रचलन था और न सरलता से हवाई यात्रा उपलब्ध ही थी, अतः बीरबल साहनी प्रथम श्रेणी के कूपे में ही अपनी पत्नी के साथ यात्रा किया करते थे। और जब कभी गाड़ी किसी स्टेशन पर रुकती तो वे अपने डिब्बे की खिड़कियां बंद कर देते ताकि उनकी सुन्दर पत्नी के मुखड़े पर लोग अपनी आंखें गड़ाये न रखें।

और वह दिन भी आया जब बीरबल साहनी अपनी इस प्रेममयी पत्नी और बन्धु-बांधवों को भरी जवानी में ही अकेला बिलखता छोड़ चल दिए, परन्तु पत्नी ने उनकी मृत्यु के बाद भी उनकी जीवन सहचरी का सच्चा कर्त्तव्य निभाया। उनकी भावनाओं के अनुरूप वे सदैव वही काम करती रहीं जो प्रो० साहनी को प्रिय थे। प्रो० साहनी ने किसी समय एक स्वप्न संजोया था—पुरा-वनस्पति विज्ञान संस्थान की स्थापना का। श्रीमती साहनी ने उनकी मृत्यु के उपरांत उनके स्वप्न को साकार करने में कोई कसर उठा न रखी। उन्होंने यह सिद्ध कर दिया कि भारतीय सुन्दर पत्नियां पति के घर की चार-दीवारी तक ही सीमित न रहकर पति के उन कार्यों को भी पूर्ण कर सकती हैं जिसके लिए उन्होंने तन-मन-धन से कार्य को पूरा करने का संकल्प किया था।

पुरा-वनस्पति विज्ञान संस्थान

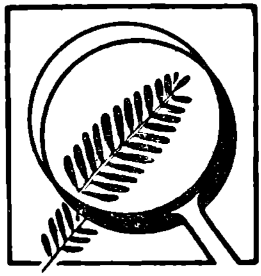
डा० बीरबल साहनी पुरा-वनस्पति विज्ञान को समर्पित थे। सन् 1939 से ही उनकी इच्छा अपने अनुसंधान कार्यों और समय-समय पर प्रकाशित शोध पत्रों और रिपोर्टों को पूर्ण रूप से एकत्र और व्यवस्थित करने के लिए एक विज्ञान संस्थान स्थापित करने की थी। प्रो० साहनी उस समय तक अंतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त वैज्ञानिक बन चुके थे। 19 मई, 1946 को पुरा-वनस्पति विज्ञान संस्थान को प्रारंभिक स्वरूप देने के लिए एक समिति का गठन किया गया और एक ट्रस्ट भी बनाया गया। उसका उद्देश्य

यही था कि ऐसा अनुसंधान संस्थान बनाया जाए जिसमें संग्रहालय पुस्तकालय और प्रयोगशाला के साथ-साथ वहां कार्य करने वाले वैज्ञानिकों के लिए मकान भी हों। प्रो० साहनी इस ट्रस्ट के अवैतनिक मुखिया नियुक्त किए गए।

देश-विदेश में प्रो० साहनी की ख्याति फैल चुकी थी। संयोग से पं० जवाहर लाल नेहरू भी उनके समकालीन होने के साथ-साथ उनके मित्रों और प्रशंसकों में से थे और लखनऊ विश्वविद्यालय में श्री साहनी द्वारा किए गए कार्यों की वह अनेक बार प्रशंसा भी कर चुके थे। इसलिए इस संस्थान के लिए सरकारी और गैर-सरकार स्रोतों से धन की कमी न रही।

और अंत में 3 अप्रैल, 1949 को 53, विश्वविद्यालय मार्ग, लखनऊ में पं० जवाहर लाल नेहरू ने इस पुरा-वनस्पति विज्ञान संस्थान की आधारशिला रखी। डा० साहनी ने इस अवसर पर उद्घाटन भाषण किया था परन्तु कल क्या होने वाला है, इसे कोई नहीं जानता और इसके एक सप्ताह बाद 10 अप्रैल, 1949 को अर्ध-रात्रि प्रो० साहनी के जीवन की काल रात्रि बन गई।

प्रो० साहनी कुछ ही दिन पहले अमेरिका में व्याख्यानमाला के दौरे से भारत लौटे थे। वे कुछ थके हुए से प्रतीत होते थे। उनके घर के तथा अन्य मित्रों ने उन्हें उनके ग्रीष्मकालीन स्थान अल्मोड़ा जाकर विश्राम करने की सलाह दी थी, परन्तु कुछ ही दिनों बाद पुरा-वनस्पति विज्ञान संस्थान की आधारशिला रखी जाने वाली थी, इसलिए वे विश्राम कैसे कर सकते थे ? और 10 अप्रैल को अत्यधिक श्रम के कारण उन्हें हृदय का दौरा पड़ा और वे प्रभु के प्यारे हो गए। अपनी मृत्यु से कुछ क्षण पहले सावित्री साहनी से उन्होंने यह कहा था कि इस विज्ञान संस्थान का पालन-पोषण करते रहना। श्रीमती सावित्री साहनी ने अपने पति द्वारा लगाए गए इस छोटे से पौधे को अपने अथक परिश्रम द्वारा अंतर्राष्ट्रीय ख्याति पर पहुंचाने में कोई कसर न रखी।



और अंत में

प्रो० बीरबल साहनी ने पुरा-वनस्पति विज्ञान के क्षेत्र में इतना अधिक कार्य किया और विज्ञान की शाखा के संबंध में विभिन्न विषयों पर इतने शोधपत्र और रिपोर्टें लिखीं तथा प्रकाशित कीं जिनका वर्णन संक्षिप्त स्थान में संभव नहीं।

वास्तव में उस समय भारतीय विज्ञान क्षेत्र में पुरा-वनस्पति विज्ञान और भारतीय भू-विज्ञान के महत्व के संबंध में बहुत-सी आशंकाएं प्रकट की जा रही थीं। प्रो० साहनी ने भारत लौटते ही इन आशंकाओं का निराकरण करके पुरा-वनस्पति विज्ञान में अनुसंधान कार्य प्रारम्भ कर दिया। वस्तुत: वनस्पति विज्ञानी तथा भू-विज्ञानी होने के कारण इन दोनों को ही पुनर्जीवित करने के लिए वह उपयुक्त व्यक्ति थे। उन्होंने भारत में आते ही पुरा-वनस्पति के साथ-साथ भू-विज्ञान के महत्व का प्रतिपादन भी किया। उन्होंने इस संबंध में वैज्ञानिकों को निरुत्साहित करने वाले जो विवाद चल रहे थे, उन्हें अपने अन्वेषणों से दूर किया और नई विधियों का आविष्कार करके इस ओर सबका ध्यान आकृष्ट किया।

बीरबल साहनी प्रियदर्शी व्यक्ति थे। शारीरिक और मानसिक दृष्टि से उनका व्यक्तित्व बड़ा ओजस्वी था। वे सदैव कष्टों

के प्रति सावधान रहते और कभी उनसे घबराते न थे। उन्होंने अनेक स्थानों पर पहल करके अनुसंधान कार्यों का नेतृत्व किया। इसलिए हम यह कह सकते हैं कि भारतीय विज्ञान के क्षेत्र में प्रो० साहनी ने जो सेवा की है वह बहुत कम वैज्ञानिकों ने की होगी। 58 वर्ष की अल्पायु में ही वह संसार की महत्वपूर्ण संस्थाओं से संबंधित हो चुके थे। इनका जीवन इतना व्यस्त रहता था कि उन्हें एक क्षण भी विश्राम करने का न मिलता था।

विज्ञान के प्रति समर्पित यह व्यक्ति अगर चाहता तो अपना जीवन बहुत आराम से बिता सकता था, परन्तु विज्ञान द्वारा देश सेवा की लगन उनमें इतने जबरदस्त रूप से घर कर गई थी कि वह न तो किसी अन्य बात की परवाह करते थे और न अपने स्वास्थ्य की। पुरा-वनस्पति विज्ञान ही उनका सर्वोपरि ध्येय था।

इस सबंध में यहां एक घटना का वर्णन करना उपयुक्त होगा।

1947 में भारत के स्वतंत्र हो जाने पर तत्कालीन शिक्षा मंत्री मौलाना अबुल कलाम आजाद ने श्री साहनी के सामने केन्द्रीय शिक्षा मंत्रालय में सचिव का पद संभालने की पेशकश की। पहले तो उन्होंने तार द्वारा मौलाना आजाद को सूचित कर दिया कि वे यह पद संभाल लेंगे परन्तु उन्हें यह सोचकर चैन न पड़ा कि उनका स्थान तो अनुसंधानशाला में है न कि किसी मंत्रालय की फाइलों में। उस दिन देर रात तक गए वह बहुत बैचेन रहे और अपने सोने के कमरे में इधर-से-उधर टहलते रहे। अंततः उनसे रहा न गया। उन्होंने अपनी पत्नी को जगाया और उनसे अपने मन की बेचैनी प्रकट की और उनकी सलाह पर रात को ही उन्होंने मौलाना आजाद को तार देकर यह सूचित किया कि मैं विज्ञान का आदमी हूं मेरा स्थान अनुसंधानशाला में है न कि किसी मंत्रालय के कार्यालय में।

और उन्होंने अपना जीवन पुरा-वनस्पति विज्ञान के लिए समर्पित कर दिया। □□

मुद्रक : सोहन प्रिंटर्स, शाहदरा, दिल्ली-32 5862